chapter 5

पंचम अध्याय

दलित समस्या और समाधान

प्रस्तावना

- जाति से दलित

(क) दलित समस्या

गरीबी (आर्थिक समस्या)

दलित-पीड़ित अवस्था

मंदिर प्रवेश

रोटी, कपड़ा और मकान

धर्म परिवर्तन

नारी उत्थान

(ख) जाति-वर्णव्यवस्था

(ग) समाधान

(1) नगर प्रवास - शहेरी क्षेत्रों में बसना

(2) लौकिक व्यवसाय

(3) राजनैतिक इकाई के रूप में एकजुट होना

(4) राजनैतिक शक्ति प्राप्त करना

(5) संविधानिक मार्ग का अनुशरण

(6) स्वप्रयास एवं स्वनिर्भरता

(7) संघर्ष, समझौता और सोदाबाज़ी की रणनीति

(8) शिक्षा सब सत्ता की कुंजी

(घ) दलित साहित्य का भविष्य

प्रस्तावना :

"जन्म लेना मनुष्य के बस की बात नहीं है ।" हिन्दी के प्रकृतिप्रेमी एवं छायावादी कवि सुमित्रानंदन पंत मानव के विषय में कहते है ।

"सुंदर है विहग सुमन सुंदर,
मानव तुम सब से सुंदरत्तम् ।"

मानव कुदरत की अनुपम देन है फिर भी मानवता संकल्प आज भी अधूरे रहे है जैसे -

"हम कौन थे,
क्या हो गए और क्या होंगे अभी,
आओ विचारें आज मिलकर ये समस्याएँ सभी ।"

आज विश्व में धर्म, वर्ण, साम्प्रदायिकता, भाषा, प्रादेशिकतावाद, भौगोलिक विभिन्नताएँ एवं सत्ता के लिए मनुष्य बंट सा गया है । राष्ट्रकवि दिनकर ने "रश्मिरथी" में कर्ण के लिए ये पंक्तियाँ कहीं थी । कर्ण पाण्डव होते हुए भी सूतपुत्र के रूप में जाना गया है ।

"मगर मनुज क्या करे ? जन्म लेना तो उसके हाथ नहीं ।
चुनना जाति और कुल अपने बस की तो है बात नहीं ।।"

लेकिन कबीर ने कहा है -

"जाति पूछो न साध की पूछ लीजिए ज्ञान ।
मोल करो तलवार का पडे रहने दो म्यान ।।"

तत्वज्ञानी भी कहते है मनुष्य कुदरत की संतान है फिर उसमें भेद क्यों ? जैसे -

"लाली मेरे लाल की जित देखूं तित लाल ।
लाली देखन मैं गई, मैं भी हो गयी लाल ।।"

आज हिन्दू धर्म चार्तुवर्ण जाति व्यवस्था में बाँटा गया है । जाति की पहचान इस प्रकार है ।

जाति से दलित :

हिन्दूओं में विभिन्न जातियों के समूह को वर्ण व्यवस्था कहते हैं जिसमें प्रत्येक वर्ग के लोगों की अपनी परंपरा और कर्म होते हैं । जाति हिन्दू समाज की सबसे बड़ी पहचान और उसका अभिशाप है । पैदा होते ही बच्चे को एक जाति मिल जाति है, जिससे वह किसी के नीचे और किसी के ऊपर

हीनता बोध और दंभ प्राप्त कर लेता है और जिससे वह मृत्यु पर्यंत मुक्त नहीं होता । यही उसका अभिशाप रूप है । यदि कोई किसी जाति का नहीं है तो वह हिन्दू भी नहीं है । आज किसी भी व्यक्ति किसी भी व्यक्ति के साथ पहचान की जाति है तो तुरंत जाति के बारे में पूछताछ होती है और निम्नजाति का मनुष्य है तो तुरंत ही चेहरे पर बदलाव आ जाता है क्योंकि वे झूठ, अंधविश्वास और हिंसा उनके प्रमुख हथियार है । वे देश और समाज तथा मानवता के साथ विश्वासघात भी कर सकते हैं । वर्ण-व्यवस्था की सबसे बड़ी विड़म्बना केवल जन्म के ही आधार पर आदमी-आदमी के बीच में भेद की दीवार खींच देता है । इसमें एक व्यक्ति को जन्म से ही शूद्र एवं पवित्र तथा बुद्धिमान तथा बलवान मान लिया, जब कि दूसरे वर्ग को जन्म से मूर्ख, गँवार, दुर्बल, पापी एवं नीच मान लिया । शूद्र कुल में जन्म लेने से सदाचारी व्यक्ति को भी नीच माना जाता है । लेकिन यह धारणा गलत है "जन्मना जाय ते शूद्रः संस्कारात् द्विज उच्चयते" अर्थात् जन्म से सभी शुद्र है, लेकिन संस्कार ही उसे उच्च बनाता है ।[1] विश्व हिन्दू परिषद के श्री अशोक सिंघल का आरोप (मत) है कि - अस्पृश्यता इस्लाम की देन है ।[2]

संविधान में छूआछूत को समाप्त कर दिया है । परंतु खेद की बात है कि आज़ादी के इतने वर्षो के बाद भी छूआछूत वर्तमान में भी अनेक रूपों में कार्यरत है । विभिन्न क्षेत्रों में भेदभाव, कर्मचारियों का गोपनीय प्रतिवेदनों को बिगाड़ना उन्हें पदोन्नति से वंचित रखना, उन्हें कम योग्य समझना और हीन दृष्टि से देखना छूआछूत के ही रूप है । ज्यादा काम पैसे कम (कम मज़दूरी देना) सरकार द्वारा आबंटित भूमि पर कब्जा न देना आदि उल्लेखनीय हैं । एकलव्य को अपना अंगूठा गँवाना पड़ा, शम्बूक को अपनी गर्दन खोनी पड़ी क्योंकि उन्होंने आरक्षण के जातिवादी नियमों को तोड़ा था ।

वर्ण और जाति कब समाप्त होगें । इसकी कल्पना करना भी असंभव है क्योंकि इसका सीधा संबंध हिन्दू धर्म से हैं । धर्म का विरोध करना उसके द्वारा पोषित संस्थाओं को समाप्त करना एक कठिन कार्य है ।"[3] जाति विहीन समाज की स्थापना के लिए बहुत लंबी लड़ाई लड़नी होगी यह तभी होगा जब निचली और पिछड़ी जातियाँ जीवन के सब क्षेत्र में दूसरों के बराबर आ गयी होगी तब वे अपने पैरों पर खड़े होकर दूसरों को खुली प्रतियोगिता करने में सक्षम होंगे शायद महात्मा गांधी ने इसलिए ही कहा था, "मैं प्रार्थना करता हूँ कि यदि मुझे फिर से जन्म लेना ही हो तो मैं ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य या शूद्र

के घर नहीं अतिशूद्र भंगी के घर जन्म पाऊँ।" इस सामाजिक समस्या का एक ही समाधान है सत्-साहित्य या मानव साहित्य । आज इस बदी को दूर करने के लिए साहित्यकार जागृत है। साहित्यकार समाज की एक ऐसी नैया है जो उसे डूबा भी सकते है और बचा भी सकते है । सर्जक अपनी रचनाओं में इस प्रकार की आवाज़ भरे कि वह आवाज़ भारतीय मानव मात्र का हिन्दू, बंगाली, मुसलमान आदि के उपर उठाना सिर्फ नेक मानव बना दें । मैं कहती हूँ कि आज वे सर्जकों को कबीर बनना पड़ेगा । कबीर जैसा बननेवाला हर सर्जक सामाजिक उत्थान में भागीदार बनकर मानवधर्म का बिगुल बजा सकता है ।

इस अध्याय में हम शोध प्रबंध का निष्कर्ष प्रस्तुत करते हुए दलित संबंधी विविध मुद्दों की संक्षिप्त चर्चा करेंगे ।

दलित समस्या :

भाजपा की नेता श्री उमाभारती ने कहा था, "अति पिछड़ें और दलितों का ख्याल न रखा गया तो गृहयुद्ध का खतरा है ।"[4] आज दलित वर्ग उपेक्षा, बहिष्कार, तिरस्कार और साहित्यिक अन्याय की अभूतपूर्व संकटालिन स्थिति से गुजर रहा है । दलित भी देश के समान नागरिक हैं, बल्कि निर्विवादरूप से देश के मूल निवासी हैं । आर्य प्रजा मध्य एशिया से हिन्दूस्तान में आकर स्थापित हुई है । आवश्यकता आने पर संकटग्रस्त समाजों के बीच से हि उनके मुक्तिमार्ग दाता मसीहा पैदा होते है । जैसे - **"यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत ।"**

आज़ादी मिलने के बाद दलितों ने थोड़ी बहुत राहत की साँस ली है फिर भी लगातार सामाजिक अन्याय और उत्पीड़न का सामना दलितों को करना पड़ रहा है । दलित साहित्य के मूलतः दो उद्देश्य हैं, पहला वर्णाश्रम जैसी अमानवीय समाज व्यवस्था से विरोध और दूसरा उनके स्थान पर एक नई समाजव्यवस्था को स्थापित कर देश की जनता को कष्टों से मुक्त कराना। आईये हम दलित समस्या के कुछ पहलूओं को देखें ।

गरीबी (आर्थिक समस्या) :

संपत्ति का संचय शोषण से होता है इसीसे अभाव और गरीबी जन्म लेती है । गरीबी मानव जीवन की सबसे बड़ी पीड़ा है । जिसमें व्यक्ति मानव जीवन की मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति नहीं कर पाता है तब परिणाम स्वरूप वह शोषण और अन्याय का शिकार होता है । यह गरीबी तब और

दु:खद होती है जब वह मानव निर्मित हो । हालाँकि गरीबी अक्सर मानव निर्मित ही होती है पर जब वह जन्म से ही गरीबी निर्धारित हो जाय तो असह्य होती है । दलित समाज अपनी मूलभूत आवश्यकताओं के लिए संघर्षरत है जिसके अभाव में उसके सारे के सारे मानवीय अधिकार छिन गए है और वह शोषणयुक्त जीवन जीने के लिए अभिशप्त है, यही उसकी मुख्य समस्या है । गरीबी हटाओं का नारा अब समाप्त हो चुका है जबकि गरीबों हटाओं सूत्र कार्यान्वित है । स्वर्गस्थ प्रधानमंत्री राजीव गांधी ने कहा था - गरीबों की सहायता के लिए जो एक रूपया निकलता है उसमें 15 पैसे उन तक पहुँचते हैं । इस बात को दुष्यंतकुमार त्यागी "साँये में धूप" में इस प्रकार कविता की पंक्ति द्वारा कहा -

यहाँ तक आते आते नदियाँ सूख जाती है
मुझे मालूम है, पानी कहाँ ठहरा हुआ है ।

(साँये में धूप)

दलित साहित्य में यहीं गरीबी केन्द्र में रही । कोई भी कहानी हो उसमें आर्थिक संकट उसका प्रथम पहलू रहा है । देश में 40 प्रतिशत से अधिक लोग गरीबी रेखा से नीचे हैं । सामाजिक पिछड़ापन बहुत कुछ अंशों में गरीबी के कारण है । देश में गरीबी के कारण साड़े पाँच लाख लोग भिखारी हैं । गरीबी के कारण पचास लाख बच्चे बाल मज़दूरी करते है । नब्बे प्रतिशत मज़दूरों को कोई सामाजिक आर्थिक सुरक्षा प्राप्त नहीं है ।

दलित-पीड़ित-अवस्था :

शंकराचार्य का कहना है कि - "जाति व्यवस्था के अनुसार जीना और सोचना ही भारतीय संस्कृति का सच्चा अनुगमन है । यदि विभिन्न जातियों का संमिश्रण होगा तो राष्ट्र नष्ट हो जायेगा ।"[5] अस्पृश्यता सवर्ण मानस में जड़वत है । "दिनमान" ने इस कथन के पक्ष में विभिन्न राज्यों के सर्वेक्षण प्रकाशित किए गुजरात के 9 जिलों के 105 गाँवों में से 39 में हरिजनों को सवर्णो के कुओं से पानी भरने पर पाबन्दी है ।"[6]

महाभारत में कहा गया है कि - "शूद्र सब का दास है ।"[7] अछूतपन की शुरूआत सन् 400-500 के मध्य में हुआ । "उन दिनों परम पू. वैष्णव गुप्त - सम्राटों का शासन था और वे शक्तिशाली, वैभव संपन्न शासक थे । संस्कृत भाषा का अधिकांश साहित्य उन दिनों में लिखा गया । उसी दौरान गौ-मांस भक्षकों को अछूत श्रेणी में दाखिल किया गया । उससे पूर्व वे

अपवित्र तो थे, लेकिन अछूत नहीं ।"[8] शूद्रों के जीवन के संबंध में मैक्समूलर ने लिखा है, "धर्मशास्त्रों में ऐसी व्यवस्था है कि चाण्डालों, श्वपाकों का निवासस्थान गाँव से बाहर होगा ।" आज का साहित्यकार उन प्राचीन ग्रंथों से मानवों को प्रताड़ित करनेवाली व्यवस्था के विरोध में अपना स्वर मुखरित कर मानव मात्र की समानता की बात करता है ।

मंदिर प्रवेश :

भारत में 8 लाख से ज्यादा हिन्दू मंदिर हैं । भगवान के दस अवतार, तैतीस करोड़ देव-देवियाँ है फिर भी मनुष्यों में भेदभाव हैं । मंदिरों में आज भी अछूतों को प्रवेश करने नहीं दिया जाता । वे पीटे जाते है । मंदिरों में हिन्दू घूसने नहीं देते । राजस्थान के नाथद्वारा में भी यही हाल हैं। स्वामी अग्निवेश मंदिर प्रवेश अभियान चलाते है । खेद की बात है कि "गाँधीजी ने गुजरात में एक भी हिन्दू मंदिर अछूतों के लिए नहीं खुलवाया।"[9] हिन्दू मंदिरों में दलितों को नहीं जाना चाहिए, क्योंकि दलित हिन्दू है ही नहीं । किसी कवि ने कहा है -

"हम तो है इन्सान, तु काहे का भगवान ।
कहते हैं सब का मालिक एक, फिर क्यूं तेरी अलग पहचान ।।"

वास्तविकता यह है कि आज काफ़ी सुधार है हम आशा करें कि सत्-साहित्य से भेदभाव समाप्त होगा और अस्पृश्यता जैसा दूषण मानव के मन में दूर चला जायेगा ।

रोटी, कपड़ा और मकान :

रोटी :

जिंदा रहने के लिए मनुष्य की पहली आवश्यकता भोजन की है । भोजन के बिना प्राणी के रूप में उसका अस्तित्व संभव नहीं, सारा का सारा संघर्ष पहले रोटी के लिए ही है । फिर इसके बाद अन्य चीजों के लिए - गुजराती उपन्यासकार पन्नालाल पटेल ने 'मानवी की भवाई' उपन्यास में नायक काळु द्वारा किए हुए संवाद में - "भीख भूंडी नहीं है भूख भूंडी है ।" मूर्धन्य साहित्यकार श्री उमाशंकर जोशी जी भी अपने 'जठराग्नि' काव्य में भोजन की चर्चा की है । गाँव हो या शहर हो लोग भूखें मर रहे है चाहे अकाल हो या भूकंप, वर्णाश्रम, असमानता, शोषण, अन्याय और अत्याचार कोमी दंगे आदि रोटी के घोर शत्रु है । आज गरीब ज्यादा गरीब होते जा रहे है । अमीरों की संख्या कम हो रही है और गरीबों की संख्या बढ़ रही है।

जब तक रोज़गार नहीं दिया जायेगा, दलित लोग हिंसा, लूट-डकैती, नक्सलवादी प्रवृत्तियों में शामिल होते रहेगें ।

रोटी के लिए धर्मपरिवर्तन भी हो सकता है । मनुष्य जीने के लिए क्या नहीं कर सकता ? ऐसे भी लोग हैं जिन्हें खाई हुई रोटी पचाने के लिए दवाईयों का सहारा लेना पड़ता है और ऐसे भी लोग है जिन्हें रोटी के लिए रातदिन लहू बहाना पड़ता है तभी सिर्फ एक ही समय खाना प्राप्त हो सकता है । निराला जी की "भिक्षुक" कविता के अनुसार -

"वह आता,
दो टूक, कलेजे के करता, पछताता, पथ पर आना
पेट-पीठ दोनों मिलकर है एक ।"

" युग-पुरूष अम्बेड़कर" में पिता पुत्र से कहते है - रामजी - "अंबे (अम्बेड़कर) गरीबी के वेद, उसकी गीता, उसकी बाईबल और कुरान मात्र रोटी है, तू खूब पढ़ ।"[10]

कपड़ा :

जीवन की दूसरी मूलभूत आवश्यकता है कपड़े की । कहावत है - "एक नूर आदमी हज़ार नूर कपड़ा" जन्म से लेकर मृत्यु तक मनुष्य का व्यवहार कपड़े के साथ रहता है। चाहे अमीर हो या गरीब, भीखमंगा भी कपड़े के बिना जी नहीं सकता । हमारे देश में वर्तमानपत्रों में हम देखते है कि आज भी नंगे-अधनंगे बच्चे जी रहे हैं । चाहे वर्षा हो, चाहे शीतकाल गरीबों के पास इतना धन नहीं है कि वे मन चाहे कपड़े खरीद सके, पहन सके, अपनी लज्जा बचाने के लिए, चाहे जैसे भी कपड़े हो अपने शरीर से लिपटते है । मानवीय सभ्यता की गरीमा बचाने की कोशिश करते रहते हैं । हमें याद रखना चाहिए कि सभ्यता पूर्ण सभा के बीच अपने ही परिवारजनों ने द्रोपदी का वस्त्राहरण किया था । कपड़े की समस्या इतनी गहरी नहीं है । ऐसी समस्याओं पर दलित लेखन के साहित्य सर्जक लेखनी चलाकर समाज को आगाह करते है कि तुम्हारे जो भाई नंगे है, उन्हें भी तुम्हारी तरह बदन ढ़कने के लिए हाथ पसारों ।

मकान :

जीवन की तीसरी मूलभूत आवश्यकता है मकान की । उपन्यास "युगपुरूष अंबेड़कर" में एक प्रसंग है कि - वे बड़ौदा के लश्करी सचिव से मकान के लिए मिले - बोले - फिलहाल तलाशना होगा, रियासत मज़बूर है।

दिनभर होटल और मकान ढूँढते रहे परंतु उन्हें न किसी होटल में जगह मिली और न किसी ने उन्हें मकान ही किराये पर दिया । सब ने टका सा जवाब दिया - "यहाँ अछूतों के लिए कोई जगह नहीं ।"[11] वे मुंबई जाने के लिए स्टेशन पर बैठे थे चिंतन कर रहे थे - "अछूतों को चाहिए कि वे संतान पैदा नहीं करे - स्वयं दासानुदास तो है, अभिशप्त है और पशु से भी बदतर जीवन जी रहा है । कम से कम और दास तो जीते जी मरने के लिए पैदा मत करो । बंद करो वह पैदाचार ।" देहांतों में आज गरीबों के लिए - 'इन्दिरा आवास', 'सरदार आवास' और 'डॉ. अम्बेड़कर आवास' की योजना कार्यन्वित है । गरीबों को ज्यादातर मकान की ज़मीन गाँव से दूर उबड़-खाबड़वाली जगह दी जाती है । सरकार की सहायता में भी भ्रष्टाचार व्याप्त है । एक-दो वर्षो के बाद आवास जमीन दोस्त हो जाते हैं । शहरों और गाँवों में सरकार खुद मकान बनाकर देती है । पाठशालाओं को जब मकान उपलब्ध नहीं है तो गरीब कैसे मकान बनायेगें ? झोंपडियों, खुले रास्ते आसमान के नीचे हजारों की तादाद में लोग जीवन व्यतीत कर रहे हैं। 'गोकुल ग्राम योजना' में आवास की व्यवस्था है लेकिन भारत की आबादी दिन-प्रतिदिन बढ़ती जा रही है कि एक समस्या सुलझाने पर नई समस्याएँ सामने आती है । देश के 23 महानगरों में 1 करोड 30 लाख परिवारों में से साढ़े 69 लाख परिवारों के पास रहने के लिए एक कमरा भी नहीं है । इनमें से केवल 32 लाख परिवार केवल राजधानी दिल्ली में झोंपड़पट्टियों में रहते हैं । दलित चेतना सर्जकों ने अपने साहित्य में इस प्रकार के अनेक प्रसंगों की अभिव्यंजना की है । मानव की रोटी, कपड़ा और मकान की मूलभूत समस्याओं पर दलित साहित्य कभी चुप नहीं रहा है और भविष्य में भी यह रोशनी जलती रहेगी ।

धर्म परिवर्तन :

समय सदा एक-सा नहीं रहता है बदलता रहता है । यह सोचना गलत होगा कि मैं समजु कि आज भी मैं वही हूँ जो कल था । राजमोहन भटनागर का उपन्यास 'युगपुरुष अम्बेड़कर' के लेखक अम्बेड़कर के शब्दों से कहते है - "दुर्भाग्य से मैंने हिन्दू धर्म में जन्म लिया था । यह मेरे बस की बात भी नहीं थी लेकिन मैं हिन्दू के रूप में मरुँगा नहीं ।"[12] हिन्दू धर्म हमारी दृष्टि में पूर्वजों का धर्म नहीं है । वास्तव में यह तो उन पर दासता के कारण लादा और थोपा गया है । हमारे पूर्वजों के पास इस दासता के खिलाफ़ लड़ने के साधन नहीं थे, यही कारण वह विद्रोह नहीं कर सके और

हिन्दू धर्म में रहने के लिए विवश हो गए । अम्बेड्कर ने कहा था - "धर्म बदलने से ही मुक्ति मिल सकती है ।" गांधीजी ने जवाब दिया था - धर्म कमीज़ या मकान की तरह नहीं है, जिसे जब मरजी हो बदला जा सके । अम्बेड्कर का आशय धर्मपरिवर्तन भौतिक लाभ के लिए नहीं था । इसमें आध्यात्मिक भावना के अलावा कोई दूसरा आशय नहीं था । सिक्ख धर्म में वर्णवाद है । इसाई धर्म अपना ने में राष्ट्रीयता, संस्कृति और देशभक्ति की और संदेह उपजाता है । इस्लाम धर्म अपना ने से मुसलमानों की संख्या देश में दूनी हो जायेगी । इसाई धर्म अपना ने से अर्थ होगा ब्रिटिश प्रभुत्व को सुदृढ़ बनाना और इस्लाम धर्म अपना ने का अर्थ होगा मुस्लिम प्रभुत्व को संकट में डालना । भारत में जन्मा हूँ अंत तक सच्चा भारतीय रहना चाहता हूँ और अपनी राष्ट्रभक्ति को कायम रखना चाहता हूँ । इसीलिए मैंने किसी अन्य धर्म को न चुनकर बौद्ध धर्म चुना है ।

बौद्ध धर्म नैतिकता पर आधारित है, जबकि हिन्दू धर्म यज्ञ व बलि पर । अतः 14 अक्तूम्बर 1956 को 9-12 के बीच नागपुर में बौद्ध धर्म की दीक्षा लेली ।

बुद्धं शरणं गच्छामि ।
धम्मं शरणं गच्छामि ।
संघ शरणं गच्छामि ।

महात्मा बुद्ध विष्णु के अवतार थे - धर्म परिवर्तन से ब्राह्मिन खुश हुए मीठाईयाँ बाँटी गई - साहित्य में भी प्रगतिवादियों ने धर्म को एक नशा कहा है । धर्म के नाम पर देवालयों में पंडितो द्वारा जो आर्थिक शोषण एवं खुला योनाचार होता है उसके कई चित्र नज़र आते है । दलित चेतना के साहित्य में धर्म दलितोद्धार की एक बड़ी बाधाओं में गीना गया है । हम आशा करते है कि **'सर्वधर्म समभाव'** अब मानव धर्म का साहित्य अधिकतर प्रकाश में आये तथा हमारा समग्र समाज उसे ग्रहण करें । गुजराती साहित्य में जोसेफ मेकवान दलित गद्य साहित्य के पिता माने जाते थे । वे अनुसूचित जाति के मकवाणा थे लेकिन पूर्वजों ने ईसाई धर्म को अंगीकार किया था इसलिए वह मेकवान हो गये । आज डॉ. अम्बेड्कर एवोर्ड गुजरात सरकार जोसेफजी को नहीं दे सकती क्योंकि वे इसाई है । किसी साहित्यकार ने 'समाजमित्र' में बताया था कि जोसेफ मेकवान गुजराती साहित्य परिषद के प्रमुख कभी नहीं बन सके । क्योंकि वह हिन्दू नहीं है दलित है जबकि महाराष्ट्र राज्य में मराठी साहित्य

परिषद का प्रमुख दलित रह चुका है । क्योंकि महाराष्ट्र में ज्योतिबा फूले, शाहूजी महाराज और अम्बेड़कर का प्रभाव है । कबीर, रैदास, धना, पीपा आदि जैसे भक्त कवि जाति एवं वर्ण से दलित थे पर समाज ने उन्हें बड़ी आत्मीयता से स्वीकारा । प्रेम दिया, कभी अस्पृश्य नहीं माना अत: दलितों को भी जागृत होकर अपना स्थान स्वयं बनाने का प्रयत्न करना आवश्यक है ।

आज गुजरात सरकार ने धर्म परिवर्तन के लिए कानून बनाये हैं दलित, मुसलमान, बौद्ध, ईसाई, जैन आदि धर्म अंगीकार कर चुके है । गुजरात के संत सच्चिदानंदजी ने 'आ छेल्ली ट्रेन छे' नामक पुस्तक में हिन्दू समाज के वरिष्ठों को ललकारा है । हिन्दू धर्म में स्वतंत्रता नहीं है भाईचारा भी नहीं है और सामाजिक न्याय का अभाव है । अपने हजारों भाईयों को पशुवत जीवन व्यतीत करने के लिए बाध्य करता है हिन्दू समाज । उच्च वर्गो के हाथों बहुत संख्यक निम्नवर्ग के शोषण और दासता का प्रतीक है । धर्म कोई भी हो अगर वह मानवता समानता की कसौटी पर खरा नहीं उतरता तो समाज उसे स्वीकारेगा नहीं ।

जो धर्म मनुष्य के साथ गैर मनुष्य की तरह बर्ताव करने की शिक्षा देता है वह धर्म नहीं पर धार्मिक पाखंड है । जो धर्म मनुष्य को मनुष्य नहीं, मनुष्य के स्पर्श से अपवित्रकारी माना जाता है । उसे शिक्षा से वंचित, धनसंग्रह और शस्त्र धारण करने से मना करता है वह धर्म नहीं यातना है । "जब तक हिन्दू समाज में जाति व्यवस्था का अस्तित्व है तब तक दलितों की समस्या का निवारण संभव नहीं है और हिन्दू धर्म के रहते हुए हिन्दू समाज से जाति व्यवस्था का विच्छेद संभव नहीं है ।"[13] हाँ यह अवश्य है कि वर्ण व्यवस्था का आधार कर्म था । कर्म से वर्ण और जाति निर्धारण था यह सकारात्मक बिंदु अवश्य रहा फिर भी हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि कबीर, रैदास, धना, पीपा है । महाराष्ट्र में ज्योतिबा फूले, केरल में नारायण गुरु, तमिलनाडु में पेरियर रामास्वामी नायकर, चैतन्य, नामदेव आदि जैसे भक्त कवि एवं वर्ण से दलित थे पर समाज ने उन्हें बड़ी आत्मीयता से स्वीकारा । प्रेम दिया, कभी अस्पृश्य नहीं माना ।

नारी उत्थान :

विश्व में स्त्री और पुरूष संसार रूपी रथ के दो पहिये हैं । अगर एक पहिया अटक (रूक) जाता है तो संसार रूपी रथ स्थगित हो जाता है । विश्व

में और हिन्दूस्तान में स्त्रियाँ दलित है और दलित की स्त्रियाँ अधिक दलित है । हिन्दी के कवि ने कहा है -

"अबला जीवन की हाय तुम्हारी यही कहानी ।
आँचल में है दूध और आँखों में पानी ।।"

भारतीय समाज में पतन के लिए मनु उत्तरदायी है । मनु के पूर्व प्राचीनकाल में **"यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते, तत्र रमन्ते देवता"** । भारतीय समाज में स्त्रियों का आदर होता था । उन्हें शिक्षा, विवाह, तलाक, आत्म-विकास एवं संपत्ति संबंधी आवश्यकता अधिकार प्रापत थे किंतु बाद में उनकी दशा बहुत खराब हो गई । वे पुरूषों की जीवन संगिनी नहीं बल्कि दासी बन गई ऐसा क्यों हुआ ? कौन है इसके लिए उत्तरदायी ? समाज नारी को खिलौना समझकर उस पर हीन दृष्टि रखता है पर अब समय बदल चुका है । आज नारी पुरूष से आगे है । साहित्यकार इस बंध खिड़की को खोलने का प्रयत्न करते हुए प्रतित होते हैं ।

जाति वर्णव्यवस्था :

भारतीय समाज का बुनियादी ढाँचा लोकतांत्रिक नहीं है । यह जन्मजात असमानता पर आधारित अनेक जातियाँ, उपजातियाँ में बँटा हुआ है। भारत में जाति व्यवस्था अति प्राचीन संस्था है । भारत में जाति प्रथा का अर्थ है कि समाज को कृत्रिम हिस्सों में विभाजित करना, जो रीति-रिवाजों और शादी व्यवहार की भिन्नताओं से बंधे हो ।

बाबा साहब अम्बेड़कर ने हिन्दू प्रजाति को सबसे घटियाँ किस्म की प्रजाति माना है । जाति प्रथा से आर्थिक उन्नति नहीं होती । जाति प्रथा से न सुधार हुआ है न होगा । लेकिन इससे हिन्दू समाज पूरी तरह से छिन्न-भिन्न और हताश जरूर हुआ है । हिन्दू नाम स्वयं विदेशी नाम है । यह नाम भारतवासियों को मुसलमानों से मिला था । हिन्दूओं में जो चेतना पाई जाती है वह संकीर्ण है । अन्य किसी जाति के व्यक्ति पर हमला होता है तो हम (हिन्दू) उसकी रक्षा नहीं करते ।

यदि एक मुसलमान खतरे में है तो सारे मुसलमान उसके बचाव में दौड़ पड़ते है । लेकिन हिन्दूओं के पास ऐसी कोई शक्ति नहीं है, न कोई नेता है । उसके मन में यह विश्वास नहीं है कि शेष हिन्दू उसके बचाव के लिए आएगें । इसीलिए लड़ाई होने पर हिन्दू या तो आत्मसमर्पण कर देता है या भाग जाता है । हिन्दू एक दूसरे को अपना भाई नहीं मानते । डेनिवल

सनैल ने कहा था - "कोई व्यक्ति अपमानित होकर धन्यवाद ज्ञापित नहीं कर सकता ।"[14] इसके पीछे भी हमारी नम्रता और दीनता तथा श्रद्धा का भाव जवाबदार है । हमारी अहिंसक संस्कृति ने हमें पंगु बनाया है यह स्वीकार करना पड़ेगा ।

गुजरात के सच्चिदानंदजी ने लिखा है 'अधोगतिनु मूळ वर्णव्यवस्था' तथा 'प्रश्नोना मूळ मां' एवं एन.वी. चावड़ा लिखित 'वर्णव्यवस्था एक षडयंत्र' ग्रंथ में इस मानसिकता की आलोचना की है । कवि वाल्मीकि ने जब आहत क्रोंच पक्षी का रुदन-क्रंदन देखा तो उनके मुख से भाव उच्चरित होकर स्वतः प्रस्फूटित हो गए ।

"मा निषद प्रतिष्ठाम् त्वमगम शाधतीस्मः
यत्क्रोंच मिथुनादेकम् काममोहित वधी ।"

किसी भी मानव या प्राणी के साथ अमानवीय व्यवहार करना ही उसका दलन है । यह आर्थिक, राजनीतिक, धार्मिक, सामाजिक, सांस्कृतिक किसी भी प्रकार का हो सकता है । भारत में मुख्य दलन आर्थिक और सामाजिक होते रहे है । शंकराचार्य ने कहा था - "काँची काम कमेठी पीठ के आचार्य 1980 में, नासिक के एक पत्रकार सम्मेलन में कहते हैं कि "वर्णाश्रम हिन्दू धर्म की आधार शिला है, और यदि जाति व्यवस्था समाप्त कर दी गई तो ध्वस्त हो जायेगी ।"[15] जब तक जाति धर्म और लिंग के भेदभाव को मिटाकर सभी व्यक्तियों को समान महत्व देने के सिद्धांत के आधार पर नवीन व्यवस्था का ढाँचा नहीं खड़ा किया जाता तब तक जाति प्रथा में सुधार करने से कोई लाभ नहीं है । हिन्दू धर्म की मान्यता है - "जैसी करनी वैसी भरनी, किया नहीं तो करके देख ।

जन्नत भी है, जहन्नम भी है यकीन नहीं तो मर के देख ।"

अर्थात् कर्मफल पूर्नजन्म एवं कर्मानुसार वर्ण-जाति हमारे समाज के आधार पर रहे हैं । आज भी रहा है उसका सकारात्मक पक्ष का ।

महात्मा गाँधी ने भारतीय जाति व्यवस्था को समाप्त करने के लिए सिर्फ दिखावा ही किया । उनका कहना था कि "मैं जात-पात को नहीं मानता, यह समाज का फालतु अंग है । मैं वर्ण को अवश्य मानता हूँ । छूआछूत को कलंक माना लेकिन कोई उजागर कदम नहीं उठाया । कहा कि अस्पृश्यों को अस्पृश्य इसलिए माना जाता है कि वे जानवरों को मारते हैं और मांस, रक्त, हड्डियाँ और मैला आदि छूते है ।"[16] वाल्मीकि जाति की बस्तियों

में रहना (एक मात्र ढोंग था ।) उन्होंने प्रेम प्रकट किया है मैं मोक्ष नहीं प्राप्त करना चाहता । "मैं पुनः जन्म भी नहीं लेना चाहता, किंतु मुझे फिर से जन्म लेना ही पड़े तो मैं अछूत के घर जन्म लूं, जिससे मैं अछूतों के दुःख, कष्ट और अपमान का अनुभव कर सकूँ और मैं अपने आप को तथा दुर्दशा से बाहर निकाल सकूँ । इसलिए मैं प्रार्थना करता हूँ कि यदि मुझे फिर से जन्म लेना ही हो तो मैं ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य या शूद्र के घर नहीं अति शूद्र भंगी के घर नहीं अति शूद्र भंगी के घर जन्म पाऊँ - महात्मा गांधी ।"[17]

HANSA MEHTA LIBRARY

महात्मा बुद्ध के बाद यदि किसी युगपुरूष ने धर्म, समाज, राजनीति और अर्थ के धरातल पर क्रांति से साक्षात्कार कराने की सत्य-निष्ठा, सदविवेक और धर्माचरण से कोशिश कि तो वह थे डॉ. भीमराव अंबेड़कर "हिन्दू धर्म ने अछूतों से सम्मान से जीने और प्रगति की इच्छा छीन ली है। आज जब ब्राह्मण औरत बच्चे को जन्म देती है तो उसका मुँह हाई-कोर्ट की ओर होता है। वह सोचती है मेरा बेटा बड़ा होकर हाईकोर्ट का जज बनेगा। परंतु अछूत औरतें बच्चे को जन्म देती है वे सोचती है कि नगरपालिका में सफाई कर्मचारी की नौकरी खाली होगी तो मेरा बेटा वहाँ लगेगा ।"[18] डॉ. बाबा साहब अंबेड़कर का विराट और भव्य व्यक्तित्व 'टच एन्ड गो' से निकल नहीं सकता । उन्हीं की तो अभ्यास से ही पहचान हो सकेगी ।

भगवान के भरोसे देश चल रहा है । जहाँ बुद्धि पर ताला लग जाता है तभी श्रद्धा का आगमन होता है और पढ़े लिखे लोग भी अंधश्रद्धा में डूब जाते है । अछूत तो निरक्षर है बल्कि भक्तिवान भी है फिर भी जिनकी मेहनत से मंदिर निर्माण हुआ है भगवान की मूर्ति की प्रतिष्ठा के बाद अछूतों को मंदिर प्रवेश निषेध हैं । आख़िर है तो पत्थर की मूर्ति । सत्यम्-शिवम्-सुंदरम् उसी में निहित है । आज पढ़े लिखे लोग अंधश्रद्धा में डूबे हुए है । धार्मिक मान्यताएं जो वैज्ञानिक नहीं है फिर भी इक्कीसवीं सदी में भारत अंधश्रद्धा में डूबा हुआ है । भगवान देव-देवियों, संतों, महंतों संप्रदाय दिन प्रतिदिन बढ़ते जाते है । निष्कर्ष यह है कि "हिन्दू मंदिरों में दलितों को नहीं जाना चाहिए क्योंकि दलित हिन्दू नहीं है ।"[19]

मनुष्य धर्म के लिए नहीं है, बल्कि धर्म मनुष्य के लिए है । सच्चा धर्म यह है जो व्यक्ति के विकास में सहायक हो । शिक्षा, रोज़गार, व्यवसाय, आरक्षण, राजनीति, विदेशनीति, व्यापारीकरण, आधुनिकरण आदि में दलितों की समस्याएँ है । जैसे-जैसे चुनौतियों का सामना होता जा रहा है दलित समस्याएँ

नया रूप धारण कर रही है । साहित्य में भी दलित साहित्य, शिक्षा में खानगीकरण, नौकरियों में आरक्षण समाप्त, खानगी क्षेत्रों में निषेध मानव गरिमा जैसे प्रश्न उभरकर सामने आये है । दलित साहित्यकार इन समस्याओं के समाधानार्थ यत्र तत्र सर्वत्र प्रयत्न करते रहते हैं ।

समाधान :

"भारतीय दलितों की समस्या का समाधान आतंकवाद की तरह ही एक जटिल समस्या है । आतंकवाद को सरकार बल से समाप्त कर सकती है लेकिन दलित समस्या को समाप्त करना लोहे के चना चबाना जैसा है ।"[20] समानता, स्पर्धा केवल बराबरीवालों में होती है ।

"हिन्दूओं को चाहिए थे वेद,
इसलिए उन्होंने व्यास को बुलाया, जो सवर्ण नहीं थे ।
हिन्दूओं को चाहिए था एक महाकाव्य,
इसलिए उन्होंने वाल्मीकि को बुलाया, जो खुद अछूत थे
हिन्दूओं को चाहिए था एक संविधान
और उन्होंने मुझे बुला भेजा - डॉ. बाबा साहब अम्बेड़कर ।"[21]

दलित समस्या को हल करने के लिए अभी तक गांधीजी से लेकर भगवान तक किसी का अवतरण नहीं हुआ । दलित समस्याओं को दलित खुद ही मिटा सकते हैं । शिक्षा और सत्ता उस ताले की चाबी है । हरिवंशराय बच्चनजी कहते हैं -

"प्रार्थना मतकर, मतकर, मतकर
युद्धक्षेत्र में दिखला भुजबल
रहकर अविजित, अविचल, प्रतिपल
मनु पराजय के स्मारक है,
मठ, मस्जिद, गिरजाघर
प्रार्थना मतकर, मतकर, मतकर ।"[22]

किसी कवि ने कहा हैं -

उन हाथों को तोड़ दो
उन आँखों को फोड़ दो
जला दो खेत और तोड़ दो मटके
जिन से पानी और अन्न
के लिए झुकना पड़े

छीन लो
अपने हिस्से का आस्माँ
और धरती.....
छीन लो
वो देश
जो तुम्हारा भी तो है..... ।

प्रयत्न ही सफलता की चाबी है यही बात है, जैसे "अंधेरी रात पर दिया जलाना कब मना है ।" डॉ. उमाशंकर जोशी का कहना है दलितों को दया याचना नहीं, अधिकार मिलना चाहिए ।

त्रण वानों मुझ ने मळयां हैयु-मस्तक-हाथ,
बहु दई दीधु नाथ, जा हवे चोथु नथी मांगवुं ।

नाज़िर कहते है -

हे खुदा
बे हाथ ने हुं मारा फेलाऊ तो
तारी खुदाई दूर नथी,
पण हुं मागु ने तु आपी दे,
ए वात मने मंजूर नथी ।"

हमें प्रायश्चित नहीं भविष्य में पुनरावर्तन हो न ऐसा करें - "जो बीत गई सो बात गई ।" पर आगे हम कैसे इन छोटी-मोटी समस्याओं के निगाह पाये ऐसा साहित्य के माध्यम से लड़ना होगा ।

अब ईक्कसवी सदी का प्रारंभ हो गया है आज विश्व एक ग्राम बन रहा है तभी हमें अम्बेड़कर जैसे विचारकों के दर्शन पर चलना होगा । बाल गंगाधर तिलक ने कहा था, "स्वतंत्रता मेरा जन्मसिद्ध अधिकार है और उसे मैं लेकर रहूँगा ।" अगर वे अछूत होते तो कहते, "मानवता मेरा जन्मसिद्ध अधिकार है, और मैं इसे भारत को देकर रहूँगा । ध्यान देने की बात है कि दलितों में आज दो तरह के लोग हैं, एक वे हैं जो व्यवस्था के खिलाफ़ है और दूसरें वे हैं जो यथास्थिति बाद के हिमायती है - रामविलास पासवान ।"[23] हाँ यह आवश्यक है कि हम राजनेताओं की आँखों से नहीं देखे हमारे देखने का नज़रिया सार्वजनिक हित होना चाहिए ।

सौराष्ट्र युनिवर्सिटी के हिन्दी विभाग के अध्यक्ष डॉ. एस.पी. शर्मा दलित समस्या का समाधान के लिए कहते है और संदेश देते है - हमारा

माननना है कि समय की पुकार है ।

(1) तुम चलना सिखों,
ये सही है. कि चलने में गिर पड़ने का डर है ।
लेकिन नहीं चलोगें तो कोई
कोई तक तुम्हारी लकड़ी बना रहेगा ।

(2) तुम बोलना सिखो
ये सही है कि बोलने में बागी कहलाने का डर है ।
लेकिन तुम नहीं बोलेगें तो,
कोई कब तक तुम्हारी वकालत करेगा ?

(3) तुम लड़ना सिखों,
ये सही है कि मैं लड़ने में कट मरने का डर है ।
लेकिन तुम नहीं लड़ोगें तो,
कोई कब तक तुम्हारी ढाल बनकर रहेगा ?

आप पालकी पर सवार रहे और लोग उसे ढोएँ यह कब तक ही चलता है, आगे नहीं चलेगा क्रांति दलित का जन्मसिद्ध अधिकार है जो शोषण से पीड़ित है । आज की क्रांति की माँग है । हमारे संत मनीषी समाज सुधारक तो मार्गदर्शक है, मुक्तिदाता नहीं । अपनी मुक्ति के रास्ते अपने श्रम से स्वयं तय करते हैं । समरसता के लिए समाजसेवी संस्था ब्रह्माकुमारी के नीति वाक्य निम्नांकित है ।

"हमारा सुंदर भविष्य भाईचारे में है,
न कि आपसी भेदभाव में ।"
"ऐसे खुशनुमा : बनो जो मन की खुशी
सूरत से स्पष्ट दिखाई दे ।"
"रोते हुए को हँसाना, गिरे हुए को उपर उठाना
यह सच्ची मानवता है ।"

"बदलने की भावना जीवन को परेशानियों से भर देती है, इसे शुभ भावना में बदल दो तो जीवन सुखी हो जायेगा ।" (प्रजापति ब्रह्माकुमारी विश्वविद्यालय)

दलित समस्या के समाधान के लिए डॉ. अम्बेड़कर द्वारा दलितों को जो उपाय सुझाये गये उनमें मुख्य निम्न है ।

नगर प्रवास :

- शहरी क्षेत्र में बसना ।
- लौकिक व्यवसाय अपनाना ।
- एक राजनैतिक इकाई के रूप में एक जुट होना ।
- राजनैतिक शक्ति प्राप्त करना ।
- संविधानिक ढाँचे के अंतर्गत राजनैतिक पहल करना ।
- स्वावलंबी बनना और अपनी उन्नति के लिए स्वयं प्रयास करना ।
- संघर्ष, समझौता एवं सौदेबाजी की रणनीति अपनाना ।
- शिक्षा सब सत्ताओं की कुंजी ।

मेरा मानना है कि दलित साहित्यकारों को उपरोक्त बिन्दु दलित साहित्य की समस्याओं के समाधानार्थे अपने साहित्य में शामिल करने चाहिए ।

नगर प्रवास : शहरी क्षेत्रों में बसना :

भारत की बहु संख्यक जनता दरिद्रनारायण जनता है । जब तक दलित सवर्णो के साथ एक ही गाँव में रहेंगे तब तक वे भेदभाव, अत्याचार और शोषण के शिकार होते रहेगें । इसलिए दलितों के पृथक गाँव बनाने के लिए सरकार को भूमि आवंटिती करनी चाहिए । आगे चलकर अम्बेड़कर ने दलितों को शहरी क्षेत्रों में स्थायी रूप से बसने की सलाह दी थी । शहरों में छूआछूत और भेदभाव की गुंजाइश कम होती है । लोगों को पुलिस और प्रशासन तक पहुँच पाना आसान हो जाता है । इसलिए नगरों में दलितों पर अत्याचार विशेषरूप से सामूहिक अत्याचार की संभावना बहुत कम होती है । इस हेतु दलितों को शिक्षित होना पड़ेगा तथा सवर्णो के प्रति धृणास्पद भाव के साथ यह सहयोग प्राप्त करने का भाव रखना होगा ।

लौकिक व्यवसाय :

देश का आर्थिक 40 प्रतिशत हिस्सा देश के 358 लोगों के पास है। दलितों को गंदे व अपवित्र कार्यो का परित्याग कर देना चाहिए और दलितों को अपनी आजीविका लौकिक व्यवसायों से कमानी चाहिए । नगरों में व्यक्ति को सामान्य तथा दफ्तर, कारख़ाना, व्यापार, भवन या सड़क निर्माण आदि का कार्य करना पड़ता है । जो ख़ुले होते है, समय निश्चित होता है । गाँव की तुलना में शहर में व्यक्ति को मज़दूरी अधिक मिलती है। समय बचाते है जो मानसिक एवं सांस्कृतिक विकास के कार्य भी कर सकते है । गाँव में दलितों का जीवन पशुवत होता है । दिन-रात मज़दूरी का काम करना होता है

। उनके बच्चे भी इसी रास्ते पर चलते है । उन्हें समय नहीं मिलता कि शिक्षा प्राप्त करें । हर समय गाँव में मज़दूरी उपलब्ध भी नहीं होती । न अधिकारों के प्रति जागृत होते है न अन्याय और अत्याचार के विरूद्ध संघर्ष कर पाते हैं । आज भी अनेक दलित अपने पुश्तैनी धंधे छोड़कर व्यापार, उच्च पदों पर नौकरी करके सभ्य व श्रेष्ठ जीवन जी रहे हैं। अन्यों को भी सीख लेनी चाहिए ।

राजनैतिक इकाई के रूप में एकजुट होना :

अधिकारों को प्राप्त करने के लिए राजनैतिक अधिकार की लड़ाई लड़नी पड़ेगी । इसलिए राजनैतिक इकाई के रूप में संगठित होना जरूरी है । बामसेफ, बसपा, लोजपा, जस्टीस पार्टी एवं कई प्रादेशिक राजनैतिक दलित पार्टियाँ हैं । मायावती दलित महिला होते हुए सबसे बड़े राज्य उत्तरप्रदेश की तीन बार मुख्यमंत्री बन चुकी है । रीपपब्लीकन पार्टी ने कोंग्रेस से सहयोग किया तो सामान्य बैठक पर दलित जीत पाते है । शर्त है एकजुट होने की । हमें याद है कि आरक्षित बैठक पर डॉ. अम्बेड़कर हार गये थे । इसलिए राजनैतिक दलों को एकजुट हो जाना समय की पुकार है । यह आवश्यक है कि संगठित होने में दलित अपना अस्तित्व रख सकेगें और अपने अधिकारों को प्राप्त कर सकेगें ।

राजनैतिक शक्ति प्राप्त करना :

राजनैतिक शक्ति प्राप्त करना आवश्यक है । राजनैतिक शक्ति आपके हाथ नहीं आयेगी तो आपके दु:खों का अंत नहीं आयेगा । शक्ति से तात्पर्य क्षमता से है । सिर्फ पद की कुर्सी प्राप्त करना नहीं है बल्कि नीतियों का निर्धारण किया जाये जिसके द्वारा राष्ट्रीय व सामाजिक हित के निर्णय लिये जाये । सत्ता साध्य नहीं है, सत्ता लक्ष्य प्राप्ति का साधन है । लक्ष्य ऐसा हो जो सामाजिक न्याय पर आधारित हो और राष्ट्रीय हित का संवर्धन करना हो । दलित साहित्य (हिन्दी व गुजराती) सामाजिक न्याय की वकालत करता है ।

संविधानिक मार्ग का अनुसरण :

राजनैतिक शक्ति संवैधानिक ढाँचे के भीतर और बाहर से प्राप्त की जा सकती है । दलितों को अपने अधिकार पाने के लिए अहिंसा के सहारे आंदोलन करने होंगे । जिसमें उनकी समस्याओं पर सरकार विचार करें ।

स्वप्रयास एवं स्वनिर्भरता :

जब तक दलित स्वयं दलित समस्या के लिए आगे नहीं बढ़ेगा समस्या को हल करना असंभव होगा । स्वामी दयानंद सरस्वती जी ने और ऐसे कई संतों ने प्रयत्न किये लेकिन न छूआछूत मिटा है न अछूतों की स्थिति में सुधार हुआ है । अम्बेड़कर ने शिक्षित बनो, संगठित बनो, संघर्ष करो का नारा दिया । स्वतंत्रता किसी को उपहार के रूप में नहीं मिलती । उसके लिए संघर्ष किया जाता है । अधिकार याचना से नहीं कठिन संघर्ष से प्राप्त होता है, स्वावलंबी बनना । दलितों की मुक्ति दलितों के स्वयं के प्रयास से ही संभव है । वह तभी हो सकता है वे शिक्षित एवं संगठित हो । दलित लेखकों को ऐसा साहित्य सृजन करना पड़ेगा जो उनकी पीढ़ी को स्वनिर्भर बनने में मदद करें ।

संघर्ष, समझौता और सोदाबाजी की रणनीति :

भारत में दलितों के हाथ में सत्ता केन्द्रित होने की संभावना तो और भी कम है ऐसी स्थिति में कमज़ोर अल्पमत का बहुमत के साथ संघर्ष करना सही रणनीति नहीं है । अच्छा है कि समझौता कर लिया जाय । सहयोग करने में बुराई नहीं है । भले दलित सरकार न बना सकें लेकिन उसे बनाने में और उसे बनाये रखने में अवश्य अहम् भूमिका निभा सकते हैं । समर्थन देने पर अपने कार्यक्रम को क्रियान्वित करने तथा दलितों की अपेक्षित भागीदारी दिये जाने के लिए सौदेबाजी कर सकते हैं । दलित पहलें स्वयं सच्चे अर्थो में मानवीय दृष्टिकोण अपना के संपूर्ण मानवता हेतु साम्यभाव सीखें वह स्वयं के रक्षण की अपेक्षा समाज एवं सरकार से न ले ।

शिक्षा सब सत्ता की कुंजी :

शिक्षा ही बदलाव का सबसे बड़ा उत्प्रेरक है । आज अधिकांश दलितों के पास जीवन यापन के लिए कुछ भी नहीं है, क्योंकि उनके पास शिक्षा नहीं है । आज के युग में शिक्षा के बिना कुछ भी प्राप्त नहीं हो सकता । शिक्षा मनुष्य को गुलामी के गर्त से उठाकर शिखर का रास्ता दिखाती है, लेकिन प्राप्तकर्ता के अंदर लगन होनी चाहिए, शिक्षा एक महत्वपूर्ण यंत्र है जो सारी व्यवस्था को संचालित करती है । जैसे मनुष्य के शरीर का कोई अंग काम करना बंध कर दे तो वह नष्ट हो जाता है, उसी प्रकार जिस व्यक्ति के पास शिक्षा नहीं है वह व्यक्ति मरे हुए व्यक्ति के समान है । संस्कृत साहित्य में अनपढ़ों को पशु तुल्य कहा गया है । जो व्यक्ति शिक्षित होगा उसे आगे बढ़ने का रास्ता खुद-ब-खुद मिलता चला जाएगा । चाहे वह व्यापार हो या सरकारी नौकरी हो । लेकिन उस व्यक्ति को हमेशा परिश्रम करना चाहिए, लगन होनी

चाहिए तभी वह एक दिन अपनी मंजिल प्राप्त कर पाएगा । दलितों को यही रास्ते पर चलना होगा । अपनी मुक्ति के रास्ते अपने श्रम से तय करते है ।

दलित साहित्य का भविष्य :

"जूठा होता है वो गले से गाता है,
भूखा होता है वह पेट से गाता है,
सच्चा होता है वह दिल से गाता है ।"

अर्थात् दलित साहित्यकार ही दलित साहित्य लिख सकता है । दलित साहित्य समया-स्वतंत्रता और बंधुता की स्थापना का साहित्य है "जब तक यह विषय व्यवस्था अबाधित है, तब तक दलित साहित्य अमर है इसी दलित लेखकों की भूमिका हजारों वर्षो के विषय व्यवस्था नहीं होगा । यह व्यवस्था समूल नष्ट करने के लिए कुछ वर्ष लगेंगे । अगर देश में दलित है तो दलित साहित्य भी है फिर चाहे उसे साहित्य की कसौटी पर कस खारिज किया जाय या मंजूर किया जाये - केदारनाथ सिंह ।"[24]

मानसिक रूप से यह स्वीकार नहीं हुआ कि अल्पसंख्यकों और दलितों की भी दुनिया है और वह अपनी ही है । ये कोई बाहर के लोग हैं - इस कुंठा से अधिकतर हिन्दू उच्च वर्ग मानसग्रसित है । उच्च वर्ण की यह मानसिकता रही है कि यदि दलित का उद्धार करना है तो हम नाक पर कपड़ा रखकर उसके मुहल्ले में चले जायेंगे और उस पर मेहरबानी कर दलितों की सेवा करने का ढोल पीटेंगे । किन्तु यदि कोई दलित हमारे समाज में घुस आय तो उसकी ऐसी-तैसी कर दी जायेगी । आज दलित साहित्य अपना वजूद बना रहा है तो उच्चवर्णीय मानसिकता वाले ऊपर-नीचे हो रहे हैं । हिन्दी का उपन्यास साहित्य एक स्नोब और निपरे हुए वर्ण का वाणी-विलास है । दलितों की चित्रित यातना में संघर्ष और स्वप्नों में सौंदर्यशास्त्र के वे मानदंड कहाँ जिनसे आज तक ये अभिजात वर्ग के समालोचक कला का मूल्यांकन करते रहते हैं ।

"हम कौन थे, क्या हो गए और क्या होंगे अभी ।
आओ विचारें आज मिलकर ये समस्या सभी ।।"[25]

दलित साहित्य ऐसे स्वस्थ और जनतांत्रिक मूल्यों की तलाश का साहित्य हैं जिसमें अब स्वच्छ पर्यावरण की चिंता भी शामिल हो रही है ।

एक बात तो यह है कि "चाहे जिस भाषा का दलित साहित्य हो वह लेखक या उसके समाज का भोगा हुआ सच है ।"[26] उपेक्षित जनसमूह की समस्याओं, कुरीतियों, कुंठाओं, मान्यताओं, परंपराओं, रूढ़ियों, रीतरिवाज,

पर्वो, उत्सवों, त्यौहारों उनकी पारिवारिक एवम् सामाजिक व्यवस्था उनके विश्वासों, आस्थाओं, व्यवसायों, पेयों उसकी मानसिकता, नरनारी संबंध, नारी पर होनेवाले अत्याचार, अज्ञानता उनकी काम लोलुपता उनका द्रारिद्रय उनका तनाव उनके संघर्ष, संस्कार तथा उनके रोष, क्रोध एवं सुख-दु:ख, हर्ष-रूदन दलितों के संबंध में लिखा गया साहित्य दलित चेतनायुक्त साहित्य है । अपने व्यक्तिगत एवं जातिगत अनुभवों की सारी दृष्टि और सृष्टि उनके इस साहित्य में समाविष्ट हुई है । जो देखा-भोगा, जाना-अनुभव किया उसका यथार्थ चित्रण दलित साहित्य में चित्रित है ।

दलित वर्ग की यातनाओं को यह साहित्य उद्‌गार प्रदान करता है । अपने स्वतंत्र अस्तित्व का वह उद्‌घोष करता है । सामाजिक वैषम्य पर जाति व्यवस्था तथा वर्ण व्यवस्था पर वह प्रखर आघात करता है ।

प्रा. नामवर सिंह का कहना है - "हिन्दी में दलित साहित्य के इस पुर्न:जागरण का स्वागत करता हूँ । चारसो साल पहले संत कवि रविदास और अन्य दलित संतों ने अपनी बानी से कविता को जीवंत बनाया था । आज दलित लेखक जाग उठे हैं । अपनी कहानी कहने के लिए स्वयं दलित लेखक भी समर्थ हो गए हैं । आज का दलित साहित्य प्रतिरोध की साहित्यिक परंपरा का वारिस है । मुझे पूरा विश्वास है कि जिस तरह अंग्रेजी के श्वेत वर्चस्ववादी साहित्य के वर्चस्व को अश्वेत साहित्य ने करारी चुनौती दी है । उसी प्रकार भारतीय व्यवस्था बदलनी है । परंतु उससे पूर्व बदलना है उस आदमी को, उसके मन को, उसकी सोच को जिसने हमें यह चातुवर्णीय व्यवस्था दी, यह तिरस्कार दिया । उससे छूटकारा पाने का एक मात्र साधन अपना बदलाव अपना उठाव । जब आप ऊपर उठेंगे तो और लोग अपने आप नीचे नज़र आएगें । आपके ऊपर कहने मात्र से आप ऊपर नहीं उठ पायेगें । हमें महेनत करनी पड़ेगी ।"

"जीवन के हर पथ पर, माली पुष्प नहीं बिछाता है ।
प्रगति का पथ अक्सर पथरीला ही होता है ।"

क्या दलित समस्याओं का निदान केवल उसके उग्र स्वर करने मात्र से होगा । दलितों को अपनी अस्मिता, अपना अस्तित्व, हेतु व्यैक्तिक, सामूहिक आधार पर जन-अभियान हेतु अभियान चलाना होगा । अच्छे साहित्य का अनुशीलन करना होगा । तिरस्कार का बहिष्कार कर ऐसे धर्म को अंगीकार

करना होगा जो उसको हजारों वर्ष के उद्दीपन को दूर कर, उसकी आँख खोल दे, उसके ज्ञानचक्षु खोल उसे सही मार्ग पर चलने की प्रेरणा दे, उसे उस पथ पर चलने की प्रेरणा दे, जिससे बहुजन का सुख भी हो, बहुजन का हित भी हो, वह धर्म ऐसा हो जो उसे अंतर और बाह्य रूप से समृद्धशाली करें, उसे होशपूर्ण स्थिति में लाकर उसके सर्वांगीण विकास में सहायक हो और उन उँचाइयों पर पहुँचाने में सहायक हो, जहाँ कि सभी प्रकार का भेद ही मिट जाय, जहाँ एक आदमी का दु:ख पूरी मानवता के दु:ख के रूप में दिखाई दे तभी चातुवर्ण समाप्त हो जाएगा और राष्ट्रीय एकता मजबूत होगी । हमारा ईश्वर में विश्वास है और मानव में अविश्वास । यदि हम मानव में ही भगवान देख लें तो यह स्थिति नहीं होती । नि:संदेह इक्कीसवी सदी दलित साहित्य की रहेगी । दलित साहित्य का भविष्य उज्जवल है । आज का युग उदारीकरण, वैश्विकरण और भूमण्डलीकरण का युग है । शिक्षा का प्रचार एवं प्रसार बढ़ा है दूरसंचार विश्व के कोने तक पहुँच पाया है । विज्ञान आगे बढ़ रहा है । समय के साथ दलित साहित्य कदम मिला रहा है । साहित्य की सभी विधाओं में कलम चल रही है । जो यथार्थ का चित्रण है । अत: विश्व में रंगभेद, गोरा और काला, वर्ण और कर्म का सिद्धांत शोषण अन्याय समाप्त नहीं होगा दलितों पर दमन होता रहेगा और जब तक दलित रहेंगे तब तक दलित साहित्य रहेगा ।

अंत में इस शोध प्रबंध का मूल उद्देश्य हिन्दी और गुजराती कहानी साहित्य में दलित चेतना के स्वरूप का तुलनात्मक अध्ययन करना है । आज बदलाव की गति आगे की तरफ है । आदमी-आदमी को समझे (Positive) एक दूसरे के प्रति अनुराग (Attachment) सकारात्मक सोच को, समरसता को बढ़ावा देकर एक सुव्यवस्थित शांतिपूर्ण समाज को जन्म देने में सहयोगी हो । तभी आनेवाला समय दलित स्त्रियों और अल्पसंख्यकों का होगा । मुझे आशा है इस मेरे लघु प्रमाण के द्वारा समाज का शोषित-दलित-निम्न वर्ग आलोक की एक किरण अपने अंतर्मन में जगायेगा । उनका खान-पान, पहनावा, आचार-विचार-व्यवहार आदि देखकर लगता है अभी दिल्ली कोसों दूर है । रघुवीर सिंह कहते है - दलित साहित्य ने भी हिन्दुस्तान के साहित्य में

जगह बना ली है और अंत में कहूँगा -

"'दलित चेतना'
सो कह दिया और क्षितिज भी खुल जाय,
एक रहा दूजा गया,
'दलित' दरिया लहर जाय ।"

संदर्भ ग्रंथ-सूची

1. गुजरात समाचार - दैनिक 2-12-2008 पृ.2
2. दलित समस्या - जड़ में कौन ? इन्तिजार नईम, पृ.3
3. भारतीय समाज एवं संविधान, डॉ. बी. आर. जादव, पृ.87
4. जनसत्ता - 19-2-2001
5. भारत में जातिवाद और हरिजन समस्या, जगजीवनराम, पृ.22
6. दलित समस्या - जड़ में कौन ? इन्तिजार नईम, पृ.45
7. वही, पृ.103
8. वही, पृ.103
9. भारत के अनादिवासियों का इतिहास, एस. लाल, पृ.414
10. युगपुरूष अम्बेड़कर, राजमोहन भटनागर, पृ.101
11. वही, पृ.322
12. वही, पृ.371
13. डॉ. अम्बेड़कर का विचार दर्शन, पृ.253
14. युगपुरूष अम्बेड़कर, राजमोहन भटनागर, पृ.402
15. मानव और संस्कृति, श्यामचरण दूबे, पृ.130-131
16. ज्ञाति निबंध-4, आवृति-1987, पृ.3
17. सामाजिक न्याय एवं दलित राजनीति, प्रो.श्यामलाल, पृ.31
18. वही, पृ.18
19. दलित समस्या - जड़ में कौन ? इन्तिजार नईम, पृ.45
20. दलित समस्या, जयेश भैरवीया, समाजमित्र-2002, जून, पृ.21
21. सामाजिक न्याय संदेश पत्रिका, फरवरी-2003, पृ.23
22. आज के लोकप्रिय कवि बच्चन, चंद्र गुप्त विद्या अलंकार, पृ.60
23. न्याय चक्र, अंक-9-1995, पृ.7
24. चिंतन की परंपरा और दलित साहित्य, बेचैन चौबे, पृ.285
25. दलित कहाँ जाएँ, जियालाल आर्य, पृ.53
26. गुजराती साहित्य में दलित कलम, रमणिका गुप्ता, पृ.10